AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

अनुवाद परंपरा और ओड़िआ समीक्षा– ग्रंथों का भाषांतर

ORIGINAL ARTICLE

Author

डॉ. शिशिर बेहेरा
सहकारी प्रोफेसर, उड़िआ विभाग
महाराजा श्रीरामचंद्र भंजदेव विश्वविद्यालय
बारिपदा, मयूरभंज, ओड़िशा, भारत

शोध सार

यद्यपि अनुवाद का अध्ययन हाल के दिनों में एक प्रमुख विषय बनकर उभरा है, 'अनुवाद' का मुद्दा सभ्यता के प्रारंभिक चरण से ही मौजूद है। जब एक जाति या समूह दूसरी जाति या समूह के साथ एकीकृत होता है, तो यह दोनों के बीच सामाजिक, आर्थिक, वाणिज्यिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक आदान–प्रदान में अनुवाद का प्रमुख योगदान रहता है। मात्र एक भाषा से दूसरी भाषा में रूपांतरण (To render A text in one language to Another) को अनुवाद नहीं कहा जा सकता। यह भाषा, साहित्य, संस्कृति की अनेक प्रक्रियाओं का निर्धारक भी है। इस क्षेत्र में अनुवाद साहित्य का प्रसंग अधिक महत्वपूर्ण है।

मुख्य शब्द

अनुवाद, अनुवादक, कलात्मक अनुभूति, समीक्षा ग्रन्थ, ओड़िआ भाषा–साहित्य.

परिचय

लगभग प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व से अनुवाद संग्रह की चर्चा की काफी जानकारी मिली है। सिसरो, होरेस, क्विंटिलिअन जैसे आलोचकों ने अनुवाद को मूल साहित्य का प्रतिद्वंद्वी माना, जबकि इसके विपरीत, सेनेका और उनके अनुयायियों ने शाब्दिक अनुवाद पर अधिक जोर दिया। अनुवाद और संबंधित विषयों पर काफी चर्चाएँ प्रकाशित हुई दिया जैसे Translatology, theory of translation, translation theory, translistics आदि ने विभिन्न परिभाषाओं में अनुवाद की चर्चा को जन्म दिया, जिसे उन्होंने 'अनुवाद अध्ययन' (Translation Studies) का नाम दिया। यह अनुवाद की चर्चा को एक अलग पाठ या अध्ययन के विषय के रूप में मान्यता देता है। अनुवाद की चर्चा विशेष चर्चा का विषय बनती जा रही है। तुलनात्मक साहित्य के क्षेत्र में भी इसका उपयोग उल्लेखनीय है। अनुभूति को व्यक्त करने का एक प्रयास है अनुवाद। अनुवाद मनुष्य की मानसिक एवं कलात्मक अनुभूति को साहित्य के माध्यम से प्रवाहित करने में सहायक होता है। समय के साथ बदलते हुए, अतीत संग वर्तमान और भविष्य को एक साथ रख अनुवाद उसके स्वरुप का निर्माण करता है, क्योंकि सभी कालों और सभी देशों में अनुवाद का उद्देश्य एक समान है।

एक भाषा में लिखे गए विषय को दूसरी भाषा में व्यक्त करना इसका उद्देश्य है, लेकिन इस व्यक्त या प्रकाश के अलग–अलग मायने हैं इसीलिए कहा जाता है: "With the development of Translation Studies As A discipline In its own right with A methodology that draws on comparatistics and cultural history- Translation hasbeen A major shaping force in the development of world culture And no study of comparative Literature can take place without regard to translation." (Translation History and culture : Susan Bassnett And Andre Lefevere)

"एक अनुशासन के रूप में अनुवाद अध्ययन के विकास के साथ अपने आप में एक ऐसी पद्धति के साथ जो तुलनात्मक और सांस्कृतिक इतिहास पर आधारित है। अनुवाद विश्व संस्कृति के विकास में एक प्रमुख आकार देने वाली शक्ति रही है और तुलनात्मक अध्ययन नहीं किया गया है अनुवाद की परवाह किए बिना साहित्य हो सकता है।" (अनुवाद इतिहास और संस्कृतिरू सुसान बैसनेट और आंद्रे लेफेवरे)। कुछ लोग अनुवाद को कला, विज्ञान बोलते हैं तो कुछ इसे मूल भाषा का विरूपण, पाप कर्म, विदेशीपन कहते हैं। हालाँकि भाषा–साहित्य के प्रसार में हीं अधिक सहायक होता है।

अनुवाद के मूल घटक दो प्रकार के होते हैं स्रोत भाषा (Source Language) और लक्ष्य भाषा (Target Language)। जिस भाषा से अनुवाद किया जाता है वह स्रोत भाषा है और जिस भाषा में अनुवाद किया जाता है वह लक्ष्य भाषा है, परंतु यदि स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में शाब्दिक अनुवाद किया जाए तो उसका सफलतापूर्वक अनुवाद नहीं किया जा सकता। एक सार्थक अनुवाद के लिए एक से अधिक विषयों को ध्यान में रखना आवश्यक है जैसे, सांस्कृतिक मतभेद। कई अनुवाद इस अवगति की ओर इशारा करते हैं उदाहरणः यदि किसी अंग्रेजी उपन्यास का उड़िआ में या कोई भी भारतीय भाषा से किसी अन्य भाषा में अनुवाद किया जाता है, तो उसकी सांस्कृतिक विविधता पर ध्यान दिया जाएगा क्योंकि ओड़िशा की संस्कृति या भारतीय संस्कृति अंग्रेजी उपन्यास में कहे गए संस्कृति से बहुत अलग है। इसी प्रकार अपनी भाषा से विदेशी भाषा में अनुवाद करने पर भी वह समस्या आयेगी जैसेः होली, रथयात्रा, जन्माष्टमी, कुमारपूर्णिमा, रज, बालीयात्रा, विभिन्न त्योहार आदि ओड़िशा की अपनी संस्कृति है, इसका शाब्दिक अनुवाद तो संभव ही नहीं है। इस क्षेत्र में अनुवादक को बहुत सचेत रहना होगा। संस्कृति के इन महत्वपूर्ण अनुप्रयोगों को समझाने के लिए जहाँ आवश्यक हो वहाँ 'पदटीका' का प्रयोग करके इस संबंध में व्याख्या करना होगा इसलिए एक सफल अनुवाद का उद्देश्य सांस्कृतिक विशिष्टता या specification को संरक्षित रखना है। केवल शब्दीय विषयों और घटनाओं से चिपके रहना पर्याप्त नहीं हो इसके साथ ही भाषाई पहलुओं के प्रति सतर्क रहना भी जरूरी है। प्राचीन काव्य, लोककथाएँ, धार्मिक ग्रंथ, क्लासिक रचनाएँ आदि का अनुवाद करते समय उसकी भाषाई विशेषताओं पर ध्यान देना पड़ता है। यदि अनुवाद की भाषा में यह गंभीरता न झलके तो उसे पढ़ने योग्य नहीं माना जा सकता क्योंकि हर कवि–लेखक की अपनी शैली होती है। ऐसे में अनुवाद के दौरान उक्त प्रक्रिया पर लक्ष कर पालन करना जरूरी है विशेषकर कविता मुख्यतः अनुभव की बात करती है। अनुवाद के दौरान उस अनुभव को भाषा में उचित रूप से व्यक्त करना अनुवादकों का एक कार्य है। अनुवादक लेखक की तरह स्वतंत्र नहीं होता और न ही उसे अपने विचारों को स्वतंत्र रूप से विस्तार करने का अवसर मिलता है। वह बाधा–बंधन, सीमा–सरहद में कैद है। हालाँकि, इसमें अभी भी कई संभावनाएँ हैं। वे अपनी भाषा की सारी संभावनाओं को निवेश करते हुए सामाजिक–सांस्कृतिक भिन्नताओं में भी काम पूरा करेंगे।

दोहरे या द्वेत अनुवाद (Double Translation) में अक्सर कुछ समस्याएँ उत्पन्न होने का ख़तरा रहता है। इस प्रकार के अनुवाद में जब किसी पाठ का मूल भाषा से लाक्षा भाषा में अनुवाद किया जाता है तो उसी लक्ष्य भाषा की सहायता से उक्त पाठ का अनुवाद दूसरी बार किसी अन्य लाक्ष भाषा में किया जाता है। उदाहरण, कुछ किताबें लैटिन, ग्रीक, स्पेनिश, फारसी में हैं। प्रायः अनुवादक ऐसी मूल भाषा से परिचित नहीं होते इसलिए उनकी मूल भाषा उस पाठ का अंग्रेजी अनुवाद बन जाती है। वे उस अंग्रेजी अनुवाद से अपनी लक्ष्य भाषा में अनुवाद करते है जैसा कि जर्मन लेखक फ्रांज काफ्का और फारसी साहित्यकार अल्बर्ट कैम्यू के मामले में, यह दोहरा (द्वेत) परलक्ष्य किया जाता है। ऐसे दोहरे अनुवाद काल में चूंकि मूल भाषा से पाठ का अनुवाद नहीं किया जाता, इसलिए अनुवाद में सार्थकता अपेक्षाकृत कम हो जाती है, क्योंकि दूसरा अनुवाद पहले अनुवाद पर निर्भर हो जाता है इसके साथ ही अनुवाद सिद्धांत में 'विदेशीकरण' (फॉरेनाइजेशन) और 'घरेलूकरण' (डोमेस्टिकेशन) की भी चर्चा की गई है। अनुवाद के क्षेत्र में किसी विषय को स्रोत भाषा के अनुसार बदलना विदेशीकरण (फॉरेनाइजेशन) कहलाता है और यदि लक्ष्य भाषा के अनुसार किसी विषय को परिवर्तन किया जाता है तो उसे 'घरेलूकरण' (डोमेस्टिकेशन) कहा जाता है।

अनुवाद करते समय अनुवादक को मूल और लक्ष्य दोनों भाषाओं में निपुण होना जरुरी है। सरलता और सुगमता की कमी के कारण काम अनाकर्षक लग सकता है। अनुवादक सचेतन होना चाहिए कि वह जो कार्य कर

रहा है, किसके लिए, किस पाठक के लिए कर रहा है? उस अनुवाद का उद्देश्य और कार्य क्या होगा? यही जागरूकता ही सृष्टि के आरम्भ से जुड़ी अनुभवों और संवेदनशीलता को थामने में समर्थ हो पाएगी। सुगमता पाठक को आसानी से आकर्षित करती है। अनुदित साहित्य में पाठ्य सामग्री की निष्पक्ष प्रस्तुति, पाठ्य विरूपण की तुलना में अधिक स्वीकार्य है। 21वीं सदी के वैश्वीकरण के दौर में अनुवाद का प्रयोजन सबसे अधिक है। समय के साथ अनुवाद की धारा बदल गयी है। शाब्दिक अनुवाद, भावानुवाद का सिद्धांत से मुकरके कई सिद्धांतों में सामने आया है। सप्तदस सतक के अंग्रेजी कवि और आलोचक जॉन ड्राइडन ने इसकी त्रिपक्षीय व्याख्या की है और इसे निम्नलिखित खंडों में विभाजित किया हैः

1. किसी मेटाफ्रेज का शाब्दिक या रैखिक (पंक्ति निर्भर) अनुवाद।
2. पैराफ्रेज (यह अवधारणा अनिवार्य रूप से भवानुबाद है। स्रोत भाषा में उपस्थित कठिन भाषा लक्ष्य भाषा में अनुदित नहीं होती है)।
३. इमिटेशन (उपर्युक्त दोधारा को अतिक्रम कर इसमें टेक्स्ट का एडॉप्शन किया जाता है)।

ड्राइडन ने मेटाफ्रेज़ और पैराफ्रेज़ पर जोर दिया है। उनकी राय में 'इमीटेशन' मूल पाठ को पर्याप्त सम्मान नहीं दे पाता है। अंग्रेजी कवि और आलोचक मैथ्यू अर्नोल्ड ने अपने ग्रन्थ में मूल पाठ के अनुपालन के महत्व पर जोर दिया। इस प्रकार कैटफोर्ड भाषा विज्ञान (Linguistics) पर आधारित अनुवाद के महत्व की व्याख्या की है। उनके अनुसार "अनुवाद वास्तव में टेक्स्ट का एक भाषा से दूसरी भाषा में स्थानांतरण है और इसलिए अनुवाद का कोई भी सिद्धांत भाषाविज्ञान पर आधारित होना चाहिए। यह न केवल भाषा विज्ञान पर निर्भर करेगा; यह उनके कार्य, तात्पर्य और संस्कृति पर भी निर्भर करेगा।" इसीलिए आंद्रे लेफेब्रे ने सबसे पहले अनुवाद में "रिराइटिंग" या "पुनर्लेखन" की अवधारणा का वर्णन किया था। उनके अनुसार अनुवाद की व्याख्या "पुनर्लेखन" के रूप में की जा सकती है दूसरे शब्दों में, अनुवाद स्रोतपाठ का पुनर्लेखन है। फिर, ईवन ज़ोहर ने अनुवाद की पोलीसिस्टम प्रणाली पर अपनी राय व्यक्त की। उनके मत के अनुसार–अनुवाद साहित्य इस पोलीसिस्टम के विभिन्न भागों में अलग–अलग समय पर स्थित हो सकता है। अतः अनुवाद की कोई वर्तमान पद्धति स्थानित होगी, ऐसा संभव नहीं है। यदि अनुदित पाठ मुख्य है, तो अनुवादक लक्ष्यभाषा के प्रचलित मॉडल का पालन नहीं कर सकता है। इसी प्रकार यदि अनूदित पाठ अप्रधान हो तो अनुवादक भाषा की संस्कृति पर विशेष ध्यान दे सकता है। अनुवाद का अर्थ केवल मूल भाषा से लक्ष्यभाया में सफल रूप से अनुदित होना नहीं है। इस सत्यता को किसी भी चर्चा, निबंध या आलोचनात्मक ग्रन्थ के अनुवाद काल के दौरान समझाया जा सकता है। यहां पाठक अपनी भाषा के स्वाद के बजाय मूल पाठ के दृष्टिकोण से अधिक तथ्य द्वारा किसी विषय का मूल्यांकन करता है। ऐसे क्षेत्र में उस अवबोध को समझना और उसका अनुवाद करना अधिक प्रासंगिक है। इसमें पाठक की संतुष्टि के बजाय विचारों और लेखक की मौलिकता की प्रतिष्ठा करना होता है। वाल्टर बेंजामिन द्वारा लिखित The Task of the Translator (1921) अनुवाद पर एक उल्लेखनीय निबंध है। उनकी अनुसार "अनुवाद का कार्य मूल भाषा या टेक्स्ट के अर्थ को लक्ष्य भाषा में पाठक तक पहुंचाना नहीं है। यदि अनुवाद पढ़ने के बाद पाठक यह सोचता है कि यह उसकी अपनी भाषा में रचा गया है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि उस अनुवाद ने विशिष्टता प्राप्त कर ली है।" उन्होंने कहा है, अनुवादक केवल मूल भाषा का वक्ता ही नहीं होता; बल्कि वह बव–ंनजीवत की भूमिका निभाते हैं क्योंकि सच्चे अनुवाद का कार्य केवल रूपान्तरण या स्थानांतरण करना ही नहीं, बल्कि नये पाठों का सृजन भी है। इसके साथ ही प्रतिलेखन, transcreation, transcription और adaptation की बात कही गयी है। जब अनुवादक अपने विचारों को जोड़ता है तो उसे 'transcreation' कहते हैं। उदाहरण के तौर पर बादल सरकार के नाटक 'नोदी ते डूबिये दाओ' को लिया जा सकता है। इसे हम एडवर्ड बर्न के अनुवाद We came to the Rivers न कहकर 'transcreation' कह सकते हैं। इसी प्रकार, transcription का मतलब प्रतिलेखन को समझाता है और किसी मूल पाठ का किसी अन्य माध्यम, जैसे नाटक, द्वारा रूपांतरण को मूल पाठ का Adaptation कहा जा सकता है।

खासकर पाठ्यपुस्तकों या आलोचनात्मक पुस्तकों के अनुवाद के दौरान विशेष सावधानी बरतनी जरूरी है।

भाषा से अधिक आवश्यक है आलोचनात्मक सोच और चर्चा शैली। भारत के संस्कृत अलंकारों और उत्पत्ति के बारे में विभिन्न भाषाओं में कई किताबें लिखी गई हैं। विचारधाराओं के कई समर्थकों और विरोधियों ने अपने दृष्टिकोण के आधार पर कुछ सिद्धांतों का समर्थन करके अपनी स्वतंत्र राय व्यक्त की है। ऐसे पाठ का अनुवाद करते समय अनुवादक को मूल या अलंकारिक ग्रंथों का ज्ञान होना आवश्यक है। समीक्षक जिस सिद्धांत को मूल–आधार बनाने जा रहा है, उसकी उचित अनुसरण कर लक्ष्य भाषा में रूपांतर करना उचित है। प्राच्य अनुवाद शैली के इतिहास पर दृष्टि डालने पर अरविन्द की भूमिका स्वीकार की जाती है। वे कहते हैं एक अनुवादक के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह अच्छे भाषा–विशेष शब्दों का चयन करे। वह अपनी इच्छानुसार शब्दों का प्रयोग भी कर सकता है इसलिए अरबिंदो अनुवाद को एक अलग रचना के रूप में स्वीकार करने के पक्षपाती हैं। उन्होंने गद्य से पद्य में रूपांतरण का भी सुझाव दिया।

अनुवाद के क्षेत्र में प्रबंध ग्रंथों या तत्व ग्रन्थ अथवा आलोचनात्मक पुस्तकों का अनुवाद एक चुनौती प्रतीत होता है क्योंकि इसकी संख्या साहित्य की अन्य शाखाओं की तुलना में अपेक्षाकृत कम है। विशेषकर तत्व ग्रंथों का अनुवाद हमारी भाषा में बहुत कम होता है। निबंध, आलोचनात्मक या तत्वग्रन्थ के अध्ययन का अनुशासन भी अलग–अलग है। यद्यपि इस क्षेत्र में सिद्धांत का गहन विश्लेषण आवश्यक है, पाठक के सामने इस संपर्क में एक स्पष्ट विचार प्रस्तुत करना आवश्यक है। केवल उद्देश्य को व्यक्त करने के लिए शब्दों का शब्दों में अनुवाद करना ही अनुवाद का अंतिम लक्ष्य नहीं है; बल्कि उस सिद्धांत की चर्चा या समीक्षा के भीतर से ही विचार व्यक्त होता है, उसे स्पष्ट रूप से समझाना आवश्यक है। Knowledge text या criticism को किस प्रकार ग्रहणीय बनाया जाए, इसका ध्यान अवश्य रखना चाहिए। इस मामले में, प्रत्येक शब्द का अनुवाद करने से सारांश को समझना मुश्किल हो जाएगा इसलिए, किसी कठिन तत्व से संबंधित पाठ का अनुवाद करते समय, यह देखना महत्वपूर्ण है कि मूल प्रवचन का विस्तार कैसे होता है और उस विचार का प्रसारण कैसे होता है। ऐसे कई प्राचीन ग्रंथ हैं जिनमें अनुवादक प्रत्येक शब्द का उसके मूल संस्कृत रूप में अनुवाद कर देते हैं। फलतः पाठक इससे विमुख हो जाता है। चाहे प्राच्य धर्मग्रंथों से संबंधित चर्चा हो या किसी पाश्चात्य सिद्धांत से संबंधित चर्चा, इस समय विभिन्न प्रसंग पर चर्चा करनी पड़ती है। अनुवाद की शब्दावली में पाठक को गुमराह किए बिना उसके व्यावहारिक मूल्य और विचारों की वैधता का मूल्यांकन करना अनुवादक के लिए अधिक महत्वपूर्ण लगता है। यह अनुवाद के लिए एक चुनौती है। न केवल text का अनुवाद होता है, बल्कि अनुवादक को उस भावना को व्यक्त करने के लिए सचेत प्रयास भी करना पड़ता है। लेखक की अभिव्यक्ति को पाठकों तक पहुँचाने में अपनाई जाने वाली जो तकनीक अवलम्बन करना होगा, उसके प्रति भी एक अनुवादक को जागरूकता और धैर्य रखना चाहिए। इसी तरह एक और प्रसंग भी विचारणीय है। समीक्षा ग्रन्थ का चयन और अनुवाद की आवस्यकता महत्वपूर्ण है। अनुवादक को इस बात की जानकारी होनी चाहिए कि पाठक कौन हैं और वे पाठ के बारे में कैसा महसूस करेंगे। साधारण समझ के अभाव में लेखक की समीक्षा को समझने और स्वीकार करने में दुविधा उत्पन्न हो सकती है। पाठक के मन में इसे ग्रहण करने की मानसिकता शायद उत्पन्न नहीं हो सकती है। इसके सहित अनुवादक की कौशल और जागरूकता प्रमुख मुद्दे हैं। यदि आप किसी चीज़ पर पर्याप्त ध्यान केंद्रित किए बिना कार्य को पूरा करने का प्रयास करते हैं, तो यह भगवन गढ़ते–गढ़ते बन्दर गढ़ने जैसी स्थिति हो सकती है। सबसे पहले, पाठ का चयन और उस संबंध में उसकी सामान्य अवबोध हीं उन्हें पाठ को अनुवाद करने में मदद कर सकती है। अन्यथा यह उचित अनुवाद के स्थान पर दोषपूर्ण रचना में परिवर्तित हो जायेगा। परिणामस्वरूप, अनुवाद का उद्देश्य साधन तो दूर की बात, पाठक को नई जानकारी और सिद्धांतों के आहरण से भी वंचित रह जाएगा। इस कारण से, अनुवादक और पाठक दोनों के पास एक समान ध्यान देने योग्य अवधारणा होनी चाहिए।

हमारी भाषा में इस समीक्षा ग्रन्थ का अनुवाद बहुत सीमित है। साहित्य या अन्य विभागों में अनुवाद का प्रवाह जितना गतिशील है, इस विभाग का उत्साह अपेक्षाकृत कमज़ोर है जबकि अन्य भारतीय भाषाओं में समीक्षा ग्रंथों का अनुवाद आशाजनक रहा है, उड़िआ में यह विभाग धीमा रहा है। हमारी भाषा में कहानी, कविता, उपन्यास जैसी समीक्षा पुस्तकों के अनुवाद की आवश्यकता है। ज्ञान की प्राप्ति और दुनिया के अनुप्रयोग को हर तरह से आसान

बनाया जा सकता है। यह ज्ञात होता है कि प्रारंभिक चरण में यह कई संस्कृत तत्व ग्रंथों के अनुवाद और टीका रचना में सक्रिय थे जैसे कि ओडिशा साहित्य अकादमी ने कई पुस्तकों को प्रायोजित और प्रकाशित किया जैसे, सूर्यमणि रथ का 'रस गंगाधर', पंडित बानाम्बर आचार्य का 'नाट्यशास्त्र' (खंड 1), श्रीनिवास उद्‌गाता का 'नाट्यशास्त्र' (खंड 2), पंडित गोबिंद चंद्र मिश्र का 'नाट्यशास्त्र' (खंड 3 और 4), पंडित नारायण महापात्र का 'साहित्य दर्पण', विद्यापुरी प्रकाशन निरंजन पति द्वारा संपादित 'देव और वैदिक प्रकरण', मिनती मिश्र द्वारा लिखी 'सिद्धांत कौमुदी', फ्रेंड्स पब्लिशर्स द्वारा प्रकाशित रबिन्द्र कुमार नायक की 'कामशास्त्र' जैसे अनुवाद ग्रन्थ। ये सभी मूल संस्कृत तत्वा ग्रन्थ के अनुवाद थे, टीका और टीकाकरण का विश्लेषण केवल शब्दीय हैं। ये प्राचीन आलंकारिक ग्रंथों के ओड़िआ अनुवाद हैं। इसमें अनुवादक ने अपने ओड़िआ अनुवाद से लेखक के उद्देश्य, तत्व और सिद्धांत को ओड़िआ पाठकों के सामने परोसा है लेकिन किसी चर्चा या समीक्षा पाठ के अनुवाद के बहुत कम उदाहरण हैं जो विशेष रूप से उस पाठपर चर्चा करते हैं। सिर्फ संस्कृत ग्रंथ ही नहीं; भारतीय परंपरा, संस्कृति, कला, शिल्प, नृत्य–संगीत, लोक कला आदि पर प्रामाणिक ग्रंथ विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध हैं जिनका अनुवाद किया जाना आवश्यक है। कई पश्चिमी समीक्षा ग्रंथों का ओड़िआ अनुवाद भी आवश्यक प्रतीत होते हैं। पश्चिमी जगत द्वारा आयोजित विभिन्न विचारधाराओं, तत्व और साधनाओं की चर्चा समय–समय पर पूरे विश्व में होती रहती है। वेसब विषयों के बारे में जानने या उसके मूल सिद्धांतों से अवगत होने के लिए उक्त विषय से संबंधित चर्चाओं का अनुवाद सहायक हो सकता है। मार्क्सिज्म से लेकर मोडर्निज्म, पोस्ट –मोडर्निज्म, फेमिनिज्म, निओ – क्रिटिसिज्म, मॉडर्न – क्रिटिसिज्म, पोस्ट– कोलोनिअलिज्म, इको– क्रिटिसिज्म, डीकॉन्सट्रक्सन थिओरी, निओ –हिस्टोरिसिज्म, अब्सर्ड थिओरी, न्याराटोलोजी, एस्थेटिक थिओरी, कॉम्पैरेटिव स्टडीज, ट्रांस्लेसन स्टडीज, जेनरेटिव ट्रांसफरमसोनाल ग्रामर, स्ट्रक्चुरालिज्म, पोस्ट– स्ट्रक्चुरालिज्म, सेमांटिक्स आदि से शुरू करके, कई पश्चिमी दार्शनिक या वैज्ञानिक ग्रंथों का ओड़िआ भाषा में अनुवाद किया जा सकता है जो सिर्फ साहित्यिक चर्चा के लिए नहीं है; बल्कि, ओड़िआ पाठक के ज्ञान को विकसित करने में मदद कर सकता है। एक संपूर्ण ग्रन्थ का अनुवाद करने का प्रयत्न करना उचित है। अनुवाद ही विशाल ज्ञान को हम तक पहुँचाने का एकमात्र माध्यम है जो किसी अच्छे अनुवादक की सहायता से ही किया जा सकता है। ओड़िशा साहित्य अकादमी ने भी ऐसी कई पुस्तकें प्रकाशित की हैं। इस संबंध में फ्रेंड्स पब्लिशर्स, कटक द्वारा प्रकाशित अनंत चरण शुक्ल की पुस्तक ''अरिस्टोटल का काब्यातत्व'' स्मरणीय है। अंग्रेजी अध्यापक होने के नाते लेखक शुक्ल ने यह अनुवाद उपलब्ध अंग्रेजी पुस्तक से किया है। उल्लिखित पुस्तक में अरिस्टोटल के श्पोएटिक्सश का सरल अनुवाद एवं व्याख्या दी गयी है।

इसी प्रकार प्राच्य तत्व, भाषा तत्व, लोकसाहित्य अथवा कला–शिल्प से संबंधित पुस्तकों के ओड़िआ अनुवादों की संख्या भी नगण्य है। उदाहरण के तौर पर यहां कई पुस्तकों का हवाला दिया जा सकता है जैसेः ''काव्य जिग्यांसा'' पुस्तक। बांग्ला भाषा में लिखी इस किताब के लेखक अतुल चंद्र गुप्त हैं। ग्रन्थ का ओड़िआ अनुवाद प्रसिद्ध अनुवादक बसंत कुमार पांडा द्वारा किया गया है। यह एक बहुत चमत्कारी पुस्तक है। जिस प्रकार अनुवादक पांडा ने अनुवाद काल में परिश्रम किया है, उसी प्रकार वे मूलपाठ के अर्थ और समीक्षा पक्ष का उत्कृष्ट विश्लेषण करके उसका भाषांतर तैयार करने में सक्षम हुए हैं। इसमें ध्वनि, रस, वाणी, फल, साहित्य शीर्षकों के अंतर्गत संस्कृत अलंकार पर उन्होंने विचारकों की अस्मिता की परिचय के साथ कुछ स्थानों में उससे संबंधित प्रश्न भी उठाये। अपनी राय में चर्चा को और अधिक प्रामाणिक बनाने के लिए, लेखक अतुल चंद्रा की ''गाइकवड्र्स ओरिएंटल सीरीज़'', सुशील कुमार दे की "Studies in the History of Sanskrit poetics" का सहारा लिया है लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि इस समीक्षा पुस्तक का अनुवाद करते समय बसंत पांडा ने इससे संबंधित पुस्तक के मूल प्रसंग के साथ सहयोगी ग्रन्थ का अनुसन्धान कर इसकी एक प्रासंगिक व्याख्या की है। इसमें उन्होंने लेखक के सिद्धांत और तत्व विश्लेषण को निष्पक्ष तरीके से व्यक्त करने का ध्यान रखा है, जिससे चर्चा पाठ को ऊंचा स्थान प्राप्त हो गया है। इस अर्थ में कहा जा सकता है कि ''काव्य जिग्यांसा'' ने अनुवाद के लिए एक संभावना पैदा कर दी है। इसी प्रकार एक और समीक्षा पुस्तक ''काब्यविचार'' का प्रकाशन ओड़िशा साहित्य अकाडमी द्वारा किया गया है। पाठ का अनुवाद अनुवादक शिशिर बेहेरा ने किया है। प्रोफेसर सुरेंद्रनाथ दासगुप्त की पुस्तक 'काब्यविचार' एक दार्शनिक

प्राच्य तत्व ग्रन्थ है। बांग्ला भाषा में लिखी गई उक्त पुस्तक सार्वभारतीय साहित्य के लिए उपयोगी है। यह पहलीबार १६३६ में प्रकाशित हुआ था। प्रोफेसर दाशगुप्त ने पूर्वी काव्य सिद्धांत और तत्वराजी की दार्शनिक व्याख्या के आधार पर एक नई काव्य समीक्षा पद्धति का निर्माण किया है। लेखक ने भारतीय प्राच्य काव्य के बारे में अतीत में लिखे गए सभी अलंकारिक ग्रंथों पर ध्यान केंद्रित करके दार्शनिक आधार और उसकी जटिलता के बारे में बुनियादी चर्चा की है। अनुवादक की सतर्कता और प्रयास ने पाठ के ओड़िआ अनुवाद को सार्थक कर दिया है। अनुवादक बेहेरा की एक और विद्वतापूर्ण समीक्षा 'भारतीय प्राचीन चित्रकला' है; जिसे फ्रेंड्स पब्लिशर ने प्रकाशित किया है और पाठकिय वर्ग प्राप्त किया है। यह लेखक सुरेंद्रनाथ दाशगुप्त द्वारा लिखित किताबों में से एक है। इस पुस्तक में प्रोफेसर दाशगुप्त ने भारतीय चित्रकला के ऐतिहासिक, इतिहास और धारावाहिक शैली विकास को दर्शाया है इसके साथ ही उन्होंने प्राचीन भारत की मूर्तिकला, चित्रकला, गुहा–मंदिर के आंतरिक भाग में मूर्तिकार के कौशल, शिल्प निर्माण विधियों तथा शास्त्रों के आधार पर मूर्तिकला के विधानों की भी चर्चा की। यह अनुवाद पुस्तक कला और शिल्प के क्षेत्र में ओड़िआ पाठकों को कुछ जानकारी प्रदान करने में सहायक होगी।

यहां विचार करने योग्य एक और प्रसंग है। समीक्षा ग्रन्थ के अनुवाद के दौरान अनुवादक को सबसे पहले पुस्तक के चयन में सावधानी बरतनी चाहिए। उन्हें उस पाठ की पाठक संख्या, जरूरतों और प्रतिक्रिया को भी देखना होगा जिसका वह अनुवाद कर रहा हैं या अनुवाद करने का इरादा रखते हैं। हमें इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि समीक्षा पुस्तक का अनुवाद हमारे साहित्य को किस प्रकार आकार दे रहा है और उसकी उपयोगिता साहित्य एवं संस्कृति विमर्श के क्षेत्र में किस प्रकार विकसित हो रही है। अतः ऐसे अनुवाद की महती आवश्यकता एवं परिणाम हमारे ओड़िआ भाषा–साहित्य को मिल सकती हैं।

निष्कर्ष

साहित्य की अन्य शाखाओं की तरह समीक्षा पुस्तकों या चर्चा ग्रंथों का अनुवाद करने की आवश्यकता व प्रयोजन रही है। अनेक उपादेय प्रबंध विभिन्न भाषाओं में भी उपलब्ध हैं, जिनका मातृभाषा में अनुवाद करने से भाषा–साहित्य में सुधार होगा और उनकी अपील राष्ट्रीय जीवन को प्रभावित करेगी। आज के विकसित ज्ञान–वैज्ञानिक युग में अनुवादकों को इस आवश्यक मुद्दे पर ध्यान देना होगा। उचित पाठ चयन के साथ इसका अनुवाद करके नये ज्ञान, विज्ञान और तत्व –तथ्य विविध पहलुओं की जानकारी सार्वजनिक की जा सकती है। अनुवाद हीं अधिक विश्वसनीय एवं जिम्मेदार माध्यम है।

संदर्भ सूची

1. मिश्र, श्रीनिबास (2024) *आधुनिक ओड़िआ गद्य साहित्य,* बिद्यापुरी, कटक, ओड़िशा।
2. महांति, द्रानी (2024) *अनुवादः प्रयोग ओ संभावना,* सुवर्णश्री प्रकाशनी, बालेश्वर, ओड़िशा।
3. शर्मा, गोपाल (2017) *अनुवाद परंपरा और प्रयोग,* तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली।
4. मशंति, रूद्राणी (2004) *संकल्प,* (अनुवाद विशेषांक) जातीयकबि बीर किशोर सरकारी महाविद्यालय, कटक, ओड़िशा।
5. सामंतराय, नटवर (1964) *ओड़िआ साहित्यर इतिहास,* गंगाबाई सामंतराय, भुवनेश्वर, ओड़िशा।
6. टंडन, पुरनचंद; सेठी, हरीश कुमार (2017) *अनुवाद के बिबिध आयाम,* तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली।

––==00==––